छू लो आसमान

कोई कृष्ण नही आएगा,
तुझको समझाने।
रण कुरुक्षेत्र का तुझे स्वयं लड़ना होगा।।

के. आर. गर्ग 'भारत'

BlueRose ONE.com DIY
Stories Matter
NewDelhi • London

BLUEROSE PUBLISHERS
India | U.K.

Copyright © K. R. Garg 'Bharat' 2026

All rights reserved by author. No part of this publication may be reproduced, stored in a retrieval system or transmitted in any form or by any means, electronic, mechanical, photocopying, recording or otherwise, without the prior permission of the author. Although every precaution has been taken to verify the accuracy of the information contained herein, the publisher assumes no responsibility for any errors or omissions. No liability is assumed for damages that may result from the use of information contained within.

BlueRose Publishers takes no responsibility for any damages, losses, or liabilities that may arise from the use or misuse of the information, products, or services provided in this publication.

BlueRose ONE.com DIY
Stories Matter
NewDelhi • London

For permissions requests or inquiries regarding this publication,
please contact:

BLUEROSE PUBLISHERS
www.BlueRoseONE.com
info@bluerosepublishers.com
+91 8882 898 898
+4407342408967

ISBN: 978-81-6744-485-1

Cover Design: Ajay Dhyani

First Edition: September 2026

अपनी बात

प्रिय पाठक,

मैं आपके साथ इस काव्य संग्रह से सम्बंधित कुछ रोचक तथ्य शेअर करना चाहता हूँ। ग्रामीण अंचल से होने के कारण मुझे शुरू से ही लिखने में रुचि थी परन्तु जीवन की आपाधापी में वक्त ही नहीं मिला। परन्तु जीवन हम सभी को एक अवसर अवश्य प्रदान करता है और मुझे भी वह अवसर मिला। परन्तु विडम्बना यह रही कि मुझे वह अवसर उस समय मिला जब पूरी दुनिया में हाहाकार मचा हुआ था और सभी देश कोविड की महामारी से जूझ रहे थे। मन बहुत अशान्त था। अलग-अलग देशों में लोग परेशान थे। सभी क्रियाकलाप बन्द हो रहे थे लोगों को आर्थिक और सामाजिक क्षति हो रही थी। दफ्तर बन्द थे, कम्पनियों ने कर्मचारियों की छंटनी शुरू कर दी थी। वैश्विक संकट का हर देश पर गहरा प्रभाव पड़ा था। उस समय निराश हताश मनुष्य को अपना विवेक और धैर्य बनाए रखने के लिए मैं कर्तव्य बद्ध हो गया और प्रस्तुत काव्य संग्रह आकार लेने लगा। मैं बहुत प्रसन्नता के साथ आप सभी पाठकों का आशीर्वाद प्राप्त करने के लिए अति उत्सुक हूँ।

'धन्यवाद'

- के. आर. गर्ग 'भारत'

भूमिका

छू लो आसमान यह शीर्षक मात्र नाम नहीं, बल्कि एक दार्शनिक घोषणा है। के.आर.गर्ग 'भारत' का यह प्रथम काव्य-संग्रह कोविड-काल की उस घोर अंधकारपूर्ण रात्रि में जन्मा, जब सारी मानवता सांस लेने के लिए भी संघर्ष कर रही थी। लेखक स्वयं अपनी 'अपनी बात' में लिखते हैं - 'दफ्तर बंद थे, कंपनियों ने कर्मचारियों की छंटनी शुरू कर दी थी... मन बहुत अशांत था।' उसी अशांति से निकली ये कविताएँ अंधेरे को चीरती हुई उजाले का संदेश लेकर आई हैं। संग्रह की प्रत्येक कविता एक-एक दीपक की तरह हैं- छोटी, किंतु प्रखर।

संग्रह की मूल चेतना 'आशा का आग्रह' है। पहली कविता 'मुक्ति का आलिंगन' से ही लेखक जीवन को 'डगमगाती नौका' और मृत्यु को 'स्थिर जहाज' कहकर जीवन-मरण के द्वंद्व को सुलझाते हैं। वे कहते हैं - 'जीवन गर कर्म, मृत्यु फल है।' यहाँ मृत्यु भय नहीं, वरन् मुक्ति का आलिंगन है। ठीक इसी क्रम में दूसरी कविता 'ए नर!' पाठक को सीधे संबोधित करती है - 'उठ! जाग! सर्वत्र ओज व चुस्ती है।' गाँधी-नरेन्द्र का वंशज बनने का आह्वान, अर्जुन का गांडीव बनने का संदेश, यह सब मिलकर पाठक को अकर्मण्यता से जगा देते हैं।

तीसरी कविता 'वैश्विक मानवता' संग्रह की सबसे तीखी सामाजिक आलोचना है। लेखक संयुक्त राष्ट्र से लेकर हैवानीयत तक की दोहरी नीति को बेनकाब करते हैं। वे पूछते हैं - 'अरे! क्यों अब खुद को ही छलते हो?' यह कविता केवल आलोचना नहीं, बल्कि मानवता को आईना दिखाती है। इसी आईने को आगे बढ़ाती है कविता 'क्योंकि मैं आईना हूँ'।

'सपनों का बाजार' में लेखक सपनों को भी मोल-तोल का विषय बना देते हैं। वे कहते हैं - 'जीवन सपनों का सौदागर' बेच रहा है स्वर्णिम सपने। यहाँ सुखदेव, भगत सिंह, गांधी, शिवाजी, लक्ष्मीबाई, तुलसी-कबीर तक के सपने बिक रहे हैं। कवि पूछता है-

'भाभा, रमन, कलाम के सपने' इन्हें बना सकते हो अपने?' यह कविता युवा पाठक को सपनों की कीमत चुकाने के लिए प्रेरित करती है।

'ईश्वर भी तू, मानव भी तू' में दर्शन चरम पर पहुँचता है। प्रकृति को खजाना बताते हुए कवि कहता है - 'तू मात्र एक है लाखों में, निमित्त मात्र परिवर्तन का।' 'जीवन पथ' कविता महाभारत के रणक्षेत्र को जीवन से जोड़ती है - 'कोई कृष्ण नहीं आएगा तुझको समझाने, रण कुरुक्षेत्र का तुझे स्वयं लड़ना होगा।' यह पंक्ति संग्रह की आत्मा है।

'मौन : एक शक्ति' कविता मौन को शब्दों से भी ऊँचा स्थान देती है। 'शबरी की दृढ़ प्रतीक्षा, ध्रुव की भक्ति है मौन।' 'शिक्षक : एक पुष्पांजलि' में लेखक शिक्षक को 'अनन्त, असीम उजाला' कहते हैं। 'मछली और मछुआ' पर्यावरणीय चेतना का उत्कृष्ट उदाहरण है। मछली का उपदेश - 'हर एक एक की मैत्री हो, नहीं कभी किसी का अहित करो' - आज के जलवायु संकट में अत्यंत प्रासंगिक है।

'बारिश की नन्ही बूंदें' और 'ने साल में' प्रकृति और नूतनता का राग अलापती हैं। 'मैंने पूछा उस पक्षी से' स्वतंत्रता का प्रतीक पक्षी बनकर उड़ान की सीख देती है। शेष कविताएँ - 'हिंदी हैं हम वतन हैं', 'इंद्रधनुष सी दुनिया', 'देश नहीं बँटना चाहिए', 'उन्मुक्त गगन का पक्षी हूँ', 'मैं सृष्टि हूँ', 'जी लो जंगल', 'गाँव की याद में' - राष्ट्रप्रेम, पर्यावरण, ग्रामीण स्मृतियों और आत्म-साक्षात्कार को एक सूत्र में पिरोती हैं।

भाषा शैली सरल, सहज और संवादात्मक है। लेखक ने पारंपरिक छंदों का सहारा लिया है, किंतु आधुनिक भावों से भर दिया है। कहीं दोहे, कहीं चौपाई, कहीं मुक्त छंद - फिर भी हर पंक्ति पाठक के हृदय तक पहुँचती है। संस्कृत शब्दों ('अनवरत', 'प्रज्वलित', 'वैतरणी') का मधुर मिश्रण और महाभारत, गीता, बुद्ध, गांधी, कबीर के संदर्भ कविताओं को भारतीयता का गहरा रंग देते हैं।

यह संग्रह केवल कविताओं का संकलन नहीं, बल्कि एक युग-चेतना है। जब पूरा विश्व महामारी, युद्ध, पर्यावरण-विनाश और नैतिक पतन से जूझ रहा है, तब के. आर. गर्ग 'भारत' हमें याद दिलाते हैं - 'अंधेरों में भी उजाले हैं, बस आँखें खोलकर देखो।'

यह संग्रह युवाओं के लिए प्रेरणा-पुस्तक, वृद्धों के लिए स्मृति-मधु, और समाज के लिए दर्पण है।

'जीवन चलने का नाम' हिंदी काव्य की उस परंपरा को आगे बढ़ाता है जिसमें कवि समाज का दर्पण भी होता है और दीपक भी। लेखक का यह प्रथम प्रयास सफल है क्योंकि इसमें न केवल शब्द हैं, बल्कि एक ज्वलंत संकल्प है – 'राष्ट्र का नव निर्माण करेगा, यही प्रण है- डगर कठिन, पर नहीं हटेगा।'

पाठक! यदि आप भी कभी निराशा के अंधेरे में खो जाएँ, तो इस पुस्तक को खोलें। हर पृष्ठ पर आपको एक नया उजाला मिलेगा। के. आर. गर्ग 'भारत' ने साबित कर दिया कि कविता अब भी हृदय को छू सकती है, समाज को जगा सकती है और अंधकार को चीर सकती है।

यह संग्रह सच्चे अर्थों में 'अंधेरों में उजाले' है।

इतिश्री

अनुक्रमणिका

1.	मुक्ति का आलिंगन	9
2.	ए नर! तू जीना सीख ले	10
3.	वैश्विक मानवता	12
4.	सपनों का बाजार	17
5.	ईश्वर भी तू मानव भी तू	19
6.	जीवन पथ	22
7.	मौन : एक शक्ति	24
8.	शिक्षक - एक पुष्पांजलि	28
9.	मच्छी और मछुवा	31
10.	दिल की चाहत	36
11.	बारिश की नन्ही बूंदें	39
12.	ने साल में	42
13.	मैंने पूछा उस पंछी से	44
14.	हिन्दी हैं हम वतन हैं	46
15.	क्योंकि मैं आईना हूँ	48
16.	इंद्रधनुष सी दुनिया	50
17.	देश नहीं बँटना चाहिए	52
18.	अक्सर मैं ऐसा करता हूँ	54
19.	उन्मुक्त गगन का पंछी हूँ	56
20.	सहज पके सो मीठा होय	57
21.	हाथों की चन्द लकीरों में	59
22.	मैं सृष्टि हूँ	62
23.	जी लो जंगल	64
24.	गांव की याद में	68

1. मुक्ति का आलिंगन

जीवन एक डगमगाती नौका,
मृत्यु स्थिर जहाज बड़ा,
नौका लहरों में डोल रही,
पर शिप तूफां में शांत खड़ा।
जीवन संघर्षों की विकट धूप,
मृत्यु शीतलता का दर्पण,
जीवन गर दुख, अवसाद, त्रास,
मृत्यु मुक्ति का आलिंगन।
जीवन अनवरत अनन्त दौड़,
मृत्यु जीवन का बाईपास,
जीवन थकान, संताप, चुभन,
मृत्यु ब्रह्मा का महारास।
मृत्यु जीवन का अन्त अटल,
जीवन नश्वरता-धोखा-छल है,
मृत्यु जल-जीवन खिले कमल,
जीवन गर कर्म, मृत्यु फल है।
ऐ नर! तू पी ले ये रस भर भरकर,
दिल दिमाग को दे पोषण,
तू प्रज्वलित कर एक नई मशाल,
मन का तम हो जाए रोशन।

2. ए नर! तू जीना सीख ले

ए नर! नर की सी बात तो कर।
उजला दिन तू इस रात को कर॥
तू मनुज रूप में आया है।
जरा खुल के शंखनाद तो कर॥

चलते जाना, तू रुके नहीं।
थकते जाना, पर झुके नहीं॥
तूफानों से तू लड़ जाना।
ना गहन तमों से घबराना॥

गर रात गमों की आए तो।
मन का दीपक प्रज्वलित कर ले॥
गर मन ज्यादा घबराए तो।
दो बात खुद ही से तू कर ले॥

वो ऊपर बैठा देख रहा।
तू कैसे कदम बढाता है॥
चलता, रुकता या झुकता है।
क्यों मन घट रीता रीता है॥

तू नहीं अकेला इस पथ पर।
अनगिनत चले थे, चले गए॥
कुछ और अभी आते होंगें।
कई गान अभी गाने होगें॥

मौन निमंत्रण जीवन का।
ठुकरा मत, सहर्ष स्वीकार कर॥
देख इधर! तू सोच ना कर।
हर सुख दुख अंगीकार कर॥

सुन! मनुज बडा महान है तू।
फिर क्यों आँखों में सुस्ती है?

यह वक्त नहीं दोहराएगा।
उठ! जाग! सर्वत्र ओज व चुस्ती है॥

ईश का अनुपम वरदान है तू।
ब्रहमा का वैदिक गान है तू॥
तू नही जीव कोई साधारण।
विश्व नियति का मान है तू॥

तू उगते सूरज की तरुणाई।
तुझमें कृष्णा की परछाई॥
अर्जुन का धनुष गांडीव है तू।
तुझसे ये नियति इतराई॥

विश्वास मनों में जागृत कर।
मत हार, चला चल! चलता चल!
गांधी नरेंद्र का वंशज है।
लहरा दे नभ में स्व जयध्वज॥

बहती नदिया सा बह चल तू।
अम्बर के सुथरे बादल सा॥
चंदा की शीतल किरणों सा।
कलियों पर फिरते भ्रमर सा॥

ये दुख की जो अंगडाई है।
नव मिलन है, नहीं विदाई है॥
जरा देख दूर, पार तम के।
एक नयी सुबह अलसायी है॥

3. वैश्विक मानवता

मानवता अब जूझ रही है,
अज्ञानों की खाई से।
विश्व समूचा असमंजस में,
'इंग्लिश' लफ्जों की रूखाई से।

बन्द कक्ष में मिलते हैं वो,
विश्व शांति की खातिर।
शब्द द्वन्द से नाशक युद्धों ,
पर अड़ जाते वो 'शातिर'।

नहीं सोचते हित 'इन्सां' का,
कटु हेकड़ी दिखलाते।
मिलते गले, उड़ाते दावत,
बलहीनों को धकियाते।

सभ्य, शांत-शक्ति के वारिस,
पाखंड रचाते हर बारी।
धौंस जमाते वीटो- बल का,
करें नुमाइश बारी बारी।

जिनवा में करते पंचायत,
नही कोई इनका सरदार।
अपनी अपनी ढफली सबकी,
सबका अपना अपना राग।

जगत शांति का देते नारा,
करते हैं जूतम पैजार।
चीखें गूंज रही हैं नभ में,
नही कोई सुनने को तैयार।

लाशों के सौदागर देखो,
अधिकारों की दे रहे दुहाई।

थियानमेन से वियतनाम तक,
हैवानियत ही इनको भाई।

श्वेत वस्त्र तन पर हैं इनके,
मन मैले ज्यों काष्ठ कालिमा।
युद्ध विवाद विषय चर्चा के,
नही शर्म- हैं बड़े जालिमा।

कुटिल मुस्कान, अकड आँखों में,
मक्कारी का जाल बिछाते।
बडे बडे वादे रच कर ये,
बेबस निज जन को भरमाते।

इनके दुष्ट क्रूर सपनों से,
सीमा पर सैन्य वीर मरते हैं।
तानाशाही धर्म-कर्म से,
मासूमों का प्रमोद हरते हैं।

एटम बम्ब के देख धमाके,
मानवता आँसू रोई थी।
विप्लव पर करुणा नही जागी,
हन्ता की आँखें सोई थीं।

राजनीति का चक्र विषैला,
कैसे उपद्रवों को रोकेगा।
उपद्रवी जब सभी यहां हैं,
जीवन में यह विष घोलेगा।

अरे! क्यों अब खुद को ही छलते
हो,
दर्पण में देखो अपने दृग।
एक ही धरती, एक ही अम्बर,
क्यों व्यथित? जैसे मरु का मृग।

गूंगा बहरा हुआ - यू एन ओ,
कैसे विश्व-ध्वंस रोकेगा।

मित्र बने हैं चोर लुटेरे -
हत्यारों को क्या टोकेगा?

सागर धरती हुए हैं आकुल,
परवा नहीं महीपतियों को
तकनीकों की थोथी दुनिया,
मूल्य हीन- 'माणिक-मोतियों' को।

'लोकनीति' की निर्मम हत्या,
फिर भी यह हंसते मुस्काते।
सौदा करते अनमोल जान का -
नए नए परपंच रचाते।

हरे भरे उद्यान उजाडे,
और उजाडे सागर मौन।
घेर लिया पर्वत नदियों को,
इनकी व्यथा-सुनेगा कौन?

शेर, बाघ और हाथी हारे,
हार गए वायु और सौर।
जहाँ जाए तहाँ मची तबाही,
महफूज नहीं बची कोई ठौर।

गगन तले पंछी उडते थे,
रौंद दिए मासूमों के घर।
काट दिए तरु, बेलें सारे,
कतर दिए मूकों के भी पर।

संख्या बढा रहा बिन सोचे,
अहं-का पारावार नही है।
भाग रहा है बिन विचार के,
दिशा-दशा का भान नही है।

छोड़ वहम और जाग नींद से,
तू-नहीं जग का अधिपति होता।

लाखों जीव बसे धरती पर,
क्यों खुद का विनाश तू बोता?

छोड़ नाश का कर्म-मनुज हे!
मन चिंतन को एक बार वर।
खड़ा हुआ अन्तिम कगार पर,
जीने का भी तू उद्यम कर।

सुन्दर सुलभ भूलोक सजाया,
मधुर गान-समृद्ध गवैये।
भँवरे गूंजें, कोयल कूकें,
दोहे, गजलें और सवैये।

इन्द्रधनुष के सात रंगों में,
लुभा रही जीवन की खुशियां।
चम्पा, महुआ और चमेली,
मँहकातीं सुख-दुख की गलियां।

तू नर रह, नरभक्षी मत बन,
चांद सितारे यही सिखाते।
रुचिर कलित- निज निज कर्मों से,
भू को क्यों नही स्वर्ग बनाते?

बहती रहे- यह जीवन धारा,
सात सुरों का खेल है सारा।
निर्झर झरने- कल कल बहने दे,
कुछ कष्ट-स्वयं को भी सहने दे।

उधर रही जड़ मानवता की,
प्रेम तंतु से इसको सीने दे।
जीवन पोत अधर में अटका,
स्व-खातिर इसको तरने दे।

अब तो सिर्फ हिन्द का वासी,
भटके भव की राह बनेगा।

सत्य, अहिंसा, शक्ति सम्पन्न –
मूल्यों की कुंजी खोलेगा।
बुद्ध की इस पावन धरती पर,
ज्ञान वृक्ष फिर से उपजेगा।

मोह, क्रोध, लोभ, कामना–आदि,
बुद्धि–बोध से वो सींचेगा।
एक बार फिर बाल नरेन्द्र,
खलक तमस का पान करेगा।

विकट अही के आक्रोश गरल का,
वासुदेव फिर अहम् हरेगा।
रख आस – नर! मत हो निराश,
पूरब ने फिर ली अंगडाई है।

मन्दार नहीं – नक्षत्र सही,
ध्रुव तारे की परछाई है।
देख–जल्द ही दुनिया में,
हिन्द घोष फिर गूंजेगा।

संताप–वेदना का व्यथित सुर,
उमंग, पर्व, आनंद बनेगा।

4. सपनों का बाजार

सपनों का बाजार सजा हैं...,
क्यों तू इतना दूर खडा है?
जीवन एकमात्र विक्रेता,
बाकी सभी यहाँ है क्रेता।
भीड़ बड़ी है भारी देखो...,
नहीं कोई है खाली देखो।
कोई बेच रहा..., कोई सोच रहा...,
कोई सींच रहा... कोई तोल रहा।
जीवन सपनों का सौदागर...,
बेच रहा है स्वर्णिम सपने,
हाथ बढा कर दे दो मोल,
जीवन सपने हैं अनमोल।
सपने तुम बासंती ले लो... ,
सुखदेव, भगत, आजाद बेचते ।
राष्ट्रप्रेम है इनका मोल,
न इनको सिक्कों से तोल ।
कुछ सपने श्वेत धवल हिम जैसे... ,
शांति, सौम्यता, ऊँचाई के ।
गांधी, शास्त्री जैसी शान ,
जय जवान, जय किसान।
कुछ इन्द्रधनुषी सपने भी हैं ...,
इन्सानी वैश्विक मूल्यों के,
कीमत सद्चरित्र समभाव ,
राम-चरित, मूल्य, सद्भाव।
कुछ सपने शक्ति व ओज...,
चिंतन और शौर्य की खोज,

वीर शिवा और लक्ष्मी बाई,
इन सपनों के हैं सौदाई।
सपने हरे भरे भी मिलते...,
वो जो प्यार धरा से करते,
पक्षी, पशु, पेड़-सब कहते,
आओ हम सब मिलकर रहते।
कुछ सपने हैं सीधे साधे...,
खड़े हुए हाथों को बांधे,
कुछ सपने हैं बड़े सयाने,
हर किसी के नहीं अफसाने।
सपने तो कच्ची मिट्टी हैं ...,
चाक-चिंतन तो करना होगा,
मेहनत की अग्नि में, सुन लो,
वर्षों, दशकों तपना होगा।
भाभा, रमन, कलाम के सपने...,
इन्हें बना सकते हो अपने ?
इस्पाती... अटूट इरादे,
तभी निभा पाओगे वादे।
कुछ सपने तुलसी, कबीर के...,
रंग, गुलाल, चन्दन, अबीर के,
विश्व शांति का देते संदेश,
मानवता का धर कर वेश।
दिन के सपने, रात के सपने...,
खुली और बंद आँख के सपने,
सपनों का ही सफर है जीवन,
भटक गए तो व्यर्थ है सीवन।

5. ईश्वर भी तू; मानव भी तू

प्रकृति एक खजाना है,
खुशियों, गमगीन छटाओं का।
तू डरना–मत–पीछे हटना,
दोनों हाथों से तू सहेज
यह मौसम सर्द हवाओं का।

मत आंक इसे कमकर कमतर,
गर तू शंकर, कैलाश है ये।
यह स्रोत असीमित सुबहों की,
सूर्योदयों की आस है ये।

मानव, तू इसकी परछाई,
तू नहीं प्रकृति का अधिवक्ता।
तू मात्र एक है लाखों में,
निमित्त मात्र परिवर्तन का।

तू सोच समझ कर कारज कर,
मत भाग प्रलय की दोड़ो में।
ईश्वर का अद्‌भुत रुप है तू,
मत बह भौतिकी होड़ों में।

'जीओ और जीने दो का',
एक सुंदर वाक्य निर्माण किया।
क्यों नहीं तुझे ये दिखता है–
शंकर ने क्यों विषपान किया?

इस जहां में पसरा अंधकार,
अज्ञान, अनीति, दुराचार।
स्व मानस को रख उजियारा,
हरने को दुख सबका सारा।

नही धरा – धर्म से वंचित कर,
ना मन तन अपना कुंठित कर।

सर्वोच्च जीव इस धरती का,
पावन इसको मनवांछित कर।

रख शीश हिमालय सा ऊंचा,
नीरधि का सा गंभीर तत्व।
मत विचलित हो, तू रख विवेक,
पूर्वांचल दिनेश – तू नही अस्त।

गर तू गर्जन कर दे, मनुष्य!
काँपेगा थर थर दयुलोक।
शक्ति भक्ति का महा प्राण,
नहीं शोभित होता क्षीण शोक।

तू ध्यान धरे गर ब्रह्मा का,
शंकर विष्णु भी प्रकट हों।
क्षमताओं का नहीं अन्त तेरा,
मही वारिधि भी सरपट हों।

तुझसे ईश्वर, तुझसे ही विधि,
तुझसे अस्तित्व चराचर का।
मत हो निराश, हे! अनन्त आश,
तू... रहनुमा भवसागर का।

दशरथ मांझी ने भी नर को,
सीख यही बतलाई है–
'हिम्मत ना हारिये बिसारिये',
महीधर खंडित कर–साहस,
की राह वही दिखलाई है।

मन की उपजाऊ माटी पर,
हिम्मत की बेल उगाइये।
आशा, श्रम, ज्ञान वारि सींचे,
संकल्पों के फल पाइये।

उज्जवल भविष्य के सपनों से,
हम भूत नही तज सकते हैं।

चूक हुई थीं जो कल में,
उनसे सिद्धि पुंज बुन सकते हैं।
मकरी भी घर के कोनों में,
रेशमी धागों पर जीती है।

तितली प्रसून दलों से नित,
आशा का अमृत पीती है।
गर हार गया तो फिक्र ना कर,
ठोकर खाकर फिर चलना है।

चलना, गिरना, गिर कर उठना –
बस मंत्र यही तो जपना है।
दिनकर से आँख मिलाकर कह –
'मुझको सूरज सम तपना है'।

ना आँख मूंद, ना नजर झुका,
कह दे – यही सपना अपना है।
तपकर ही सोना खरा बने,
बिन तप ना दीप को जोत मिले।

जोखिम जीवन का स्थिर रूप,
बिन तप नही मुख में कौर चले।
रख पांव टिकाकर तू भू पर,
निज हिम्मत को फिर दे उड़ान।

आँखों में आँख डाल नभ की,
छू ले ऊंचाई – सम सुपर्ण।
ये विश्व महकता हुआ चमन,
सर्वत्र व्याप्त खुशियों का रंग।
क्यों तू उदास? मन में विचार,
खोल नयन – चहक उठेगा मन।

6. जीवन पथ

ये जीवन है ... जीवन पथ पर चलना होगा,
जीवन तो चलते जाना है, ना रुकना है ना थमना है।
बस आगे, आगे और आगे बढना होगा
कोई कृष्ण नहीं आएगा तुझको समझाने

रण कुरुक्षेत्र का तुझे स्वयं लड़ना होगा।
गर हार गया, गर बैठ गया, गर जीवन पर तू ऐंठ गया,
ये झंझावात नहीं रुकने वाले... आँखों में देख जरा इनकी,
बन गतिमान तू शक्तिमान ... शोक मोह को त्याग फेंक

धैर्य कवच, शक्ति कुण्डल...,
रणभेरी बजने वाली है ... विश्राम कहां?
प्रस्थान अभी करना होगा...।
कोई कृष्ण नहीं आएगा तुझको समझाने।

रण कुरुक्षेत्र का तुझे स्वयं लडना होगा।।
गहरे बड़े समन्दर भी तो तरने हैं,
सच्चे मोती जीवन के तुझको वरणे हैं,
बैठ किनारे व्यर्थ यूं ही पछताएगा?

गर जाना है पार तो भय तजना होगा।
कोई कृष्ण नही आएगा तुझको समझाने,
रण कुरुक्षेत्र का तुझे स्वयं लडना होगा।
क्यों आँखों में नीर? क्यों ये घबराहट है?

ये अश्क नही हैं हार, विजय की आहट है,
तू सैनिक है, तू योद्धा है-मत बन निर्बल... तू रख सम्बल।
बेशक! टेढी है ऊँचाई... मगर चढ़ना होगा

कोई कृष्ण नही आएगा तुझको समझाने,
रण कुरुक्षेत्र का तुझे स्वयं लड़ना होगा।

मत झिझक, मत ठिठक, चल और बस चलता चल
चलना जीवन-रुकना मृत्यु, क्यों फिर इतना सोच रहा
चलकर ही मुक्ति पाएगा ... रुक गया तो वापिस आएगा ...,
नही है कोई विकल्प, तुझे जीना होगा।
कोई कृष्ण नहीं आएगा तुझको समझाने
रण कुरुक्षेत्र का तुझे स्वयं लड़ना होगा।

गर आज नहीं तू जागेगा, कल कैसे तुझे निहारेगा?
पुष्पों की अभिलाषा तुझे रही होगी ...,
अम्बर को छूने की चाह जगी होगी ...,
देख राह में कांटे, मन बहका होगा ... ।
भूल गया क्यों? स्वप्न नहीं इतने आसां,
गर पाना है अर्श तो सुख तजना होगा।

कोई कृष्ण नही आएगा तुझको समझाने।
रण कुरुक्षेत्र का तुझे स्वयं लड़ना होगा॥
देख। देश भी देख रहा तेरी जानिब,
तू अर्जुन है ... आने वाले कल का नव सृजन है।

देव भी तू। मानव भी तू। ... इस वसुंधरा का भूषण है।
मत संशय कर ..., तू निश्चय कर...,
निज कर्मों से वैतरणी को तरणा होगा।
कोई कृष्ण नही आएगा तुझको समझाने।
रण कुरुक्षेत्र का तुझे स्वयं लना होगा॥

7. मौन : एक शक्ति

मौन मात्र नहीं खामोशी,
अनवरत आन्दोलन है।
मुख छवि बेशक शांत,
अन्तर मन में रण है।

मन! मत ये तू भूल,
मौन मन चिंतन है।
क्रिया का है मूल,
मौन सम दर्शन है।

शबरी की दृढ़ प्रतीक्षा,
ध्रुव की भक्ति है 'मौन'।
भाभा का 'अन्वेषण' -
अब्दुल का 'कलाम' है मौन।

मौन 'प्रवृत्ति' विश्व की,
सागर की 'गहराई' मौन।
मौन नही 'आवेश'-दुर्योधन!
शांति दूत 'कृष्ण' है मौन।

अमृत कलश-कलह का साधन,
शंकर का 'विषपान' मौन है।
इच्छाएं उद्दंड अगर,
तो तपो साधना गहन मौन है।

मौन 'बीज' है, मौन ही 'फल' है,
मौन जीव- आत्मा का 'बल' है।
मौन धरा है, मौन है अम्बर,
नहीं तत्व कोई इससे ऊपर।

असुरी युद्ध प्रलय धरती पर,
दैवीय 'धीर' - सृष्टि का मौन है।

कौरव का मद सत्ता – लोभ,
पांडव का अपराध ‘मौन’ है।

मौन नहीं कायरता– सुन लो,
श्रेष्ठ जनों का ‘भूषण’ है।
सूर्पणखा नारायण सम्मुख,
व्यर्थ करे ‘खर–दूषण’ है।

वाचालों के दुर्गम वन में,
शिरोमणियों का ‘चिन्तन’ मौन।
बल बुद्धि का नाश–‘प्रलाप’,
तो ‘ऊर्जा’ का पर्याय मौन।

कंसों के आतंकी युग में,
कृष्ण का चक्र सुदर्शन मौन।
‘आक्षेपों’ के दरबारों में,
‘अटल’ राष्ट्र भक्ति है मौन।

आततायी मुगलों के रण में,
महाराणा की ‘शक्ति’ मौन।
मौन ‘दिशा’ है, मौन ‘दशा’ है,
मौन ही ‘जीवन’, ‘मृत्यु’ मौन।

अर्जुन की ‘आकुलता’ रण में,
माधव का ‘आदेश’ मौन है।
तीर और तलवारें ‘हिंसक’,
यमुनातट पर ‘वेणु’ मौन है।

पूतनाओं का असुरी अमृत,
शिशु कान्हा का ‘उपकार’ मौन है।
श्याम सुदामा सखा निराले,
अद्‍भुत अनन्य अर्चना–मौन है।

मौन नही ‘भीरु’ का अस्त्र,
परमवीर की शान विलक्षण।

सर्व हिताय–सर्व सुखाय,
ध्येय नहीं उसका स्व रक्षण

मौन नहीं करुणा का क्रन्दन,
वीरों का सुन्दर गहना है।
मौन–क्रांति, मौन है संचय–
अब अन्याय नहीं सहना है।

मारीच अगर आतंक हुआ,
राम–समर्थ–शक्ति 'मौन' है।
चोर लुटेरों की दुनिया में,
पुरुषों का 'पौरुषत्व' मौन है।

झूठ–फरेब लरजते फिरते,
सच्चाई का जलधाम मौन है।
क्रूर, दुष्ट, बेदर्द जमाना,
सत्य, विवेक व मूल्य मौन हैं।

महाभारत की इस गाथा में,
भीष्म प्रण का मान मौन है।
धृतराष्ट्र का पुत्र मोह–दोजख,
कर्ण की 'मैत्री–शपथ' मौन है।

हाहाकार मचा है जग में,
नर नर का रिपु ज्यों मचले है।
शोर, भय, अपराध विचरते,
राजदंड क्यों शून्य मौन है?

कब तक यूँ ही मन कसकेगा?
कब तक जीवन यूँ तड़पेगा?
कब तक नर पिशाच की मानिद,
नर को ही आखिर नोंचेगा?

करें प्रतीक्षा? – कब तक लेकिन?
क्या मारुति आने वाला है?

क्या वीभत्स, भयंकर दोषी-
दुशासन का वक्ष चीरकर,

शोणित स्नान करने वाला है?
मौन नहीं स्वीकार मुझे अब,
अब तो अग्नि ही प्रज्ज्वलित होगी
मन, विचार, कर्तव्य संभालो -
तभी क्रांति सम्पूरण होगी।

8. शिक्षक - एक पुष्पांजलि

मैं एक सार इस दुनिया का,
एक कटु वार नादानी पर
या
एक वीणा का तार हूँ मैं?
या
दुनिया का श्रंगार हूँ मैं?

क्या अज्ञानता के क्षितिज की...
अन्तिम सांस हूं मैं।
बूझो जरा...
क्या-क्या? और कौन हूँ मैं?

दुनिया में छाया अंधकार,
मैं अनन्त, असीम उजाला हूँ।
अंधविश्वासों की गहरी खाई,
मैं विश्वास, ज्ञान की माला हूं,
सब कहते कि ... मैं शिक्षक हूँ।

आया फैलाने उजियारा,
बुद्धि, कौशल के सूरज का।
इन दूषित, विचलित गलियारों में,
मँहकाने खुशबू की बगिया।
उद्देश्य मेरा... मैं शिक्षक हूँ।

यह घना कोहरा शिशुपाल,
मैं कृष्ण का चक्र सुदर्शन हूँ।

हरने आया हूँ अहम् भाव,
मस्तिष्क का प्रेरक घर्षण हूँ,
क्योंकि... मैं शिक्षक हूँ।

यह लोक स्वार्थ के वशीभूत
वेदों का ज्ञान नैसर्गिक हूँ
मत चल। ए नर! अंधा होकर,
मैं निश्छल पथप्रदर्शक हूँ,
अहसास मुझे... मैं शिक्षक हूँ।

सुविज्ञ हूँ मैं, सर्वज्ञ नहीं,
बेशक, जग का मर्मज्ञ नहीं।
नही कर्ण, नही मैं ऋषि दधि,
बहती मेधा ज्यों बहे नदी,
प्रवाहशील... मैं शिक्षक हूँ।

शर्म नहीं आती मुझको,
जब कहता हूँ मैं भिक्षुक हूं।
हाँ, भिक्षुक हूं मैं विद्या का,
नाशक अज्ञान अविद्या का,
विद्यादाता... मैं शिक्षक हूँ।

नहीं धन, बल, तप की अभिलाषा,
नही भौतिक इच्छा जीवन की।
खुद जलकर राह दिखाता हूँ,
प्रज्वलित एक दीप निरन्तर हूँ,
इसीलिए ... मैं शिक्षक हूँ।

नालन्दा का मैं राजदूत,
तक्षशिला का रखवाला।
शिक्षण ही मेरा पुण्य कर्म,
निष्पक्ष ज्ञान का मन्तर हूँ,
यही उत्तम है ... मैं शिक्षक हूँ।

नही चाह प्रशस्ति पत्रों की,
अखबारों के रंगी चित्रों की।
ज्ञान गंग यूं बहती रहे,
ज्यों हृदयों में सरल सलिल।
सरल ... सहृदय ... शिक्षक हूँ।

एक नई सुबह का अभिलाषी,
शिक्षण मेरा मथुरा काशी।
नहीं लालसा ज्यादा की,
मेरा सब धन धरती वन्दन।
क्योंकि ... मैं शिक्षक हूँ।
इस जीवन का संरक्षक हूँ।
हाँ ... है गर्व मुझे, मैं एक शिक्षक हूँ।

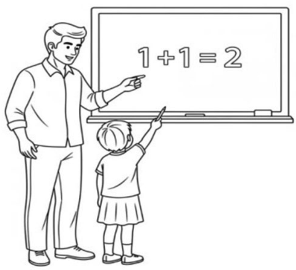

9. मच्छी का उपदेश

विराट शाँत समुद्र में,
एक मछुआरा लेकर अपनी नाव ।
मंथन हेतु निकल पड़ा है,
लिए मन में शौक और चाव।

यह सोचकर-शाम को नाव में,
अमिय का खजाना भरकर लाएगा।
और अपने परिवार के चेहरों पर-
अमरत्व की मुस्कान बिछाएगा।

वह नहीं जानता कि - समुद्र बहुत विशाल है,
और उसकी नौका उतनी ही छोटी।
भला एक छोटी सी नौका,
एक महान समुद्र का मन्थन कैसे कर पाएगी?

कैसे अमिय का खजाना ढूंढ पाएगी?
मन में असमंजस लिए,
वह अपनी नौका को लहरों पर उतार देता है,
और चारों तरफ नजरें दौड़ाता है।

दूर दूर तक केवल और केवल नीला जल,
और सागर की लहरों का असीमित बल-
जैसे कि समुद्री जीव उसकी मंशा को भाँप गया है,
समुद्र की गहराई में जाकर छिप गया हे।

धूप हुई फिर शाम हुई, लहरों पर नहीं कोई हलचल।
आँखों में घोर निराशा है- बढ़ती जाती हर बीते पल।

क्यों शाँत हुआ जलधाम आज? वारिधि जीवों से रिक्त हुआ?
एक मच्छी भी नही दीख रही, गरीब मछियारा पस्त हुआ।

आशा से रहित हुआ मछवा, कुल कैसे जीवन पाएगा?
भोजन से रहित मेरा कुनबा, क्या भूखा ही सो जाएगा?

सागर को रहा निहार वह बेचारा, जैसे सपनों से खुद हारा।
कहीं नही मीन कोई जल में, उम्मीद नहीं कोई - अब या कल में।

उधर, कहीं कोई मछली उसे निहार रही होगी?
अपने परिवार को सँवार रही होगी-
ऊपर नहीं जाना- वहाँ एक शिकारी बैठा है,
हम सब पर न जाने क्यों ऐंठा है?

चेहरे पर उसके चिंता है, जाला काँटों का बुनता है।
अभी यहीं रुको तुम सब, बच्चो-
मैं जरा घूमकर आती हूँ, कुछ खोज खबर मैं लाती हूँ।'
फिर बैठ गया वह नौका में, वापिस जाने की तैयारी।
मन मंथन नादां कर बैठा, क्यों निज सुत दारा पर ऐंठा?

मैं दुष्ट बड़ा हूँ हत्यारा, मैंने निरीह जीव को क्यों मारा?
क्यों क्रूर बना हूँ दुराचारी? अपने कर्मों से मैं हारा।
सागर गहरा, गहरी नदिया- क्यों मैंनें उथला जाल बुना?
ईश्वर ने एक वरदान दिया, क्यों मैंने फिर संताप चुना?

यूं सोचे था वह मछुआरा, काँटा नौका में गिरा दिया।
सिर पर रखे हाथ और, सीने पर सिर को टिका दिया।
क्या मैंने अब तक कर डाला? तोडी क्यों साँसों की माला।
कितनों को यूं बर्बाद किया, जीवन क्यों ना आबाद किया?

पश्चाताप करुं कैसे? घुटनों के बल वह बैठ गया।
जोड हाथ नभ को देखा, भू पर ज्यों वक्त ठहर गया।
शब्द हलक में अटक गए, आँखों से नीर बहा जाए।
मछुआरा दुखी हुआ, कैसे-अब यह संताप सहा जाए।

अधम, नीच, दुर्जन, खल, मैं – नहीं जीवन का अधिकारी।
हे नाथ, माफ कर देना तू! लख लख जाऊँ मैं बलिहारी।
निर्बल, दुर्बल, निकृष्ट जीव – उपकार नही मैंनें माना।
क्यों नहीं स्वयं को पहचाना? क्यों रहा तत्व से अनजाना?

खुदगर्जी में मैं डूब गया, ईश्वर को मैं क्यों भूल गया?
कातिल बन कर जीता हूँ मैं, क्यों परम सत्य को भूल गया?
वह स्वयं ध्यान सब को देगा, जिसने मुझको संकल्प दिया।
वह स्वयं चराचर का स्वामी, मुझको जीने का अर्थ दिया।

भारी व्याकुल है मछुआरा, निज मन को है धिक्कार रहा।
न होश उसे, सुध बुध खोया, मुक्ति का हेतु साध रहा।
मीन सतह पर जब आई, नौका को उसने स्थिर देखा।
आदम उदास उसने देखा, चेहरे पर थी दुख की रेखा।

डोंगी देखी खाली खाली, न कोई मीन, न झख शफरी।
अश्रुधारा में लिपा हुआ – हाथों में चेहरा छिपा हुआ।
मुख मलीन था, नयन लाल, लगता था उसका दुख विशाल।
लघु नेत्र, उदासी मस्तक पर, हर पल जैसे बन गया साल।

सहमी गहमी सी मत्सया ने, आखिर पूछा मत्सयजीवी से–
ष्गामगीन हुआ क्यों रे मछुवे, क्या चिन्ता तुझको खाती है?
क्यों होठ शुष्क हैं ज्यों माटी? मन का दीपक बिन बाती है॥
क्या भूख प्यास ने घेरा है? क्यों दिवस हुआ अँधियारा है?
बृहत जलधि भी हुआ मौन, क्यों गालों पर अश्रुधारा है?
नौका क्यों तेरी रीती है? क्यों भूल गया निज नीति है?

कह दे मुझ से तू सब कारण, शायद कुछ अच्छा हो जाए।
मन के अँधियारे कोने में, सुख का उजियारा हो जाए॥
एक तुच्छ जीव प्रकृति का, मानव को पाठ पढाता है।
अब सुनें ध्यान से सब श्रोता, क्या मोड कथा में आता है?

निज चिन्ता को अब त्याग दिया, आँखों में करुणा डोल रही।
परहित व्यापार बना उसका, बड प्रेमभाव से बोल रही।
मछुवा भी भूल गया हिंसा, प्रसाद बरसता नयनों से।
चेहरे पर छाया ओज बडा, भीगा सु-मधुर वचनों से।

कुदरत का मेल अजब देखो, मछली मछुवे से बतियाती।
सुख दुख को ऐसे बाँट रहे, ज्यों जले दीये में एक बाती।
मछुआरा सुनकर फफक पडा, मछली की प्रेम भरी वाणी-
मैं बडा दुष्ट दानव सम हूँ, तुम एक महान जल की रानी।

असंख्य अनगिनत कुनबों को, इन हाथों ने उजाड़ दिया।
पकड़ा, मारा, चीरा, खाया -बेरहमी से उनको काट दिया।
अब नही बचा कुछ जीवन में, पापों पर बस पछताना है।
मैं नीच, अधम प्राणी ठहरा, देखूं किस रस्ते जाना है।

माफी के लायक भी नहीं रहा, कैसे निज मुख दिखलाऊंगा?
जब मौत मिलेगी तो कैसे- मैं उससे नजर मिलाऊँगा?

अब, आज अभी से मैं मछुवा, यह प्रण लेकर कह देता हूँ-
वीर धीर सागर सम्मुख, यह भीष्म शपथ मैं लेता हूँ-
नही नौका मेरी कभी किसी वारिधि तट से टकराएगी।
नहीं रोजी मेरी मासूम जीवों की हत्या से कमाई जाएगी।

हे ईश! शरण मैं तेरी हूँ, एक नजर भर डार इधर।
उद्दण्ड दण्ड का भागी हूँ, नहीं ज्ञान मुझे अब जाऊं किधर?
अपने स्वारथ में पड कर, पुरखों के आशीष आग हुए।
जीवों की नृशंस हत्या से-सब पुण्य कर्म अब खाक हुए।

सुनकर मछुवे के वचन मधुर, मच्छी की करुणा जाग गई।
अश्कों से डुबो दिया सागर -घिन और विमुखता भाग गई।
मछुवा जो संत समान हुआ, दोऊ हाथ जोड प्रणाम किया।
मच्छी को सादर नमन बोल, सागर तल में प्रस्थान किया।

जलजीव जरा सा अकुलाया, नयनों में जल फिर भर लाया-
हे मनुज, नहीं अधीर बनो, प्रस्थान जलधि के तीर करो।
अभी बहुत प्रतीक्षा बाकी है, निज कुल की रक्षा बाकी है॥
इस तरह समर्पण ठीक नही, निर्वाण वरण अभी ठीक नहीं।
तूने खुद को अभी पाया है, कुदरत का करतब छाया है॥

क्यों सोच रहा तू मरने की? कुछ ठान करिश्मा करने की।
इस तरह अगर थक जाएगा, शाँति कभी नही पाएगा।
मछुवे को एक प्रकाश मिला, जैसे अन्धे को नयन मिले।
दिल और दिमाग जो भटके थे, फिर से मिलकर एक संग चले।

अश्कों को उसने पोंछ लिया, दारुण दुख से संकोच किया।
मुस्कान खिली उन अधरों पर, प्रस्थान तटों की ओर किया।
जब भी असमंजस छा जाए, अवसाद ज्ञान को खा जाए।
मछरी उपदेश याद करना, जीने का पूर्ण जतन करना।

नही कभी किसी का क्षय होवे, निश्चिंत नींद तब मन सोवे।
वैद्य द्वार खटकाए न, बेवजह त्रास कोई पाए न।
जीवन अमूल्य एक माणिक है, सब मोल समझ नहीं पाते हैं।
खोकर नादानी बातों से, जीवन भर रोते और पछताते हैं।

हर जीव प्रकृति का गहना, संरक्षण सबका यहां करो ।
हर एक एक की मैत्री हो, नही कभी किसी का अहित करो।

10. दिल की चाहत

दिल चाहता है – एक गीत लिखूं मैं ...
जीवन पर ... शुभ संगीत रचूं मैं।

बागों में फूलों सा महकूं,
खुशबू बन मानस में चहकूं।
रोतों को ठट्ठा दे जाऊं,
खिन्न मनों में मोद बसाऊँ।
मन कहता है ...जीव एक जीवंत बनूं मैं,
जीवन पर... शुभ संगीत रचूं मैं।

बादल बन अम्बर में टहलूं,
शशि नखत की बोली बोलूं।
खोये पथिक को राह दिखाऊँ,
भूल गये जो याद दिलाऊँ।
एक लक्ष्य है ... मानव का हर दर्द हरूं में,
जीवन पर... शुभ संगीत रचूं मैं।

लहरों सा सिंधु में मिल जाऊं,
पंक पुंडरिक बन खिल जाऊं।
हर एक जन के मन को भाऊं,
सुख समृद्धि घर घर बरसाऊं।
एक ही सुर है ...सा रे गा मा राग बनूं मैं,
जीवन पर... शुभ संगीत रचूं मैं।

भंवरा बन बगिया में घूमूं,
कलियों के दामन को चूमूं।
गली गली बन गुंजन डोलूं,
मधुर शब्द कानों में बोलूं।
मर्म एक है ... वचन सुरीले सदा कहूँ मैं,
जीवन पर ...शुभ संगीत रचूं मैं।

श्वेत कपोत सरस पंछी बन,
शांति का पैगाम बताऊँ।
धर्म अलग पर भाव एक हैं,
दुनिया को जीना सिखलाऊं।
भाव यही है ... दीनों का दुख दर्द सहूं मैं,
जीवन पर ...शुभ संगीत रचूं मैं।

दर्प नहीं पर दीप बनूं मैं,
स्याह यामिनी को चमकाऊं।
कोई नही निराश रहे,
सबको मंजिल तक पहुंचाऊं।
चाह यही है ...जुगनू बनकर श्वास बनूं मैं,
जीवन पर...शुभ संगीत रचूं मैं।

तितली रंग बिरंगी जैसे,
फूलों का रसपान करूं।
रम्य धरा के रुपक,
तत्वों को साकार करूं।
ध्येय एक है ... सौन्दर्य का 'सामर्थ्य' रहूं मैं,
जीवन पर ...शुभ संगीत रचूं मैं।

पेडों की हरियाली बनकर,
प्रदूषण का ताप मिटाऊं।
इंद्रधनुष के रंग सजीले,
झोंपड़ियों के मान सजाऊँ।
राह यही है ...मुफलिस का श्रृंगार बनूं मैं,
जीवन पर ...शुभ संगीत रचूं मैं।

ज्यों वीणा की तारों के सुर,
जग में सुन्दर राग जगाऊं।
सुर लहरी सा झूमूं मचलूं ,
हृदयों में आह्लाद मचाऊं।

अभिप्राय यही कि - माँ भारती का गान बुनूं मैं,
जीवन पर ...शुभ संगीत रचूं मैं।

अडिग, अचल, अविचल समीर बन -
जीवन को संकल्प बनाऊं।
खेल कूद कर, उमड घुमड कर -
मेघ समान अमृत रस लाऊँ।
क्यूँ कर बोलूं? मौन उपासक आज बनूँ मैं,
जीवन पर ...शुभ संगीत रचूँ मैं।

11. बारिश की नन्ही बूंदें

बारिश की नन्ही बूँदों ने,
नई छटा लहराई है।
रँग बिरंगी चादर ओढ़े,
नई चाँदनी आई है।

डाल-डाल और पात पात पर,
नया रूप घिर आया है,
कुदरत ने फिर गरज बरस कर,
स्वर्ग धरा पर छाया है।

बाग बगीचे, ताल तलैया,
मंद मंद मुस्काते हैं,
पादप पौधे, पुष्पगुच्छ भी,
पवन संग बतियाते हैं।

नदियों में नव जीवन आया,
हर तत्व हरषाया है,
कलियों से मकरंद लूटने,
मधुप टोल फिर आया है।

नृत्य गीत का मौसम प्यारा,
हर जन के मन भाया है,
क्या शाम क्या सुबह देखो,
हर पल.खुशियों का साया है।

मेघ वृन्द नभ में छाए ज्यों,
पुष्प समागम पाया है,
अंबुधर बह रहे निरन्तर,
झूम के सावन आया है।

भँवरे किलकारी दे देकर,
कलियों को खूब पुकार रहे,
आसमान से जलध जमीं पर,
सौन्दर्य अनुपम निहार रहे।

दिव्य भूमि का दर्शन करने,
देव अति व्याकुल हैं आज।
छटा निराली छाई ऐसी,
मस्ती में सब लोग लुगाई,
बौराएं तज कर सब काज।

पोखर जोहड हुईं लबालब,
मछली दादुर सरगम गाते।
'मेघा आए, बरसा लाए,
आओ मिलकर खुशी मनाते।'

मोती जैसे चमक रही हैं,
दामिनी जैसी दमक रही हैं।
मेह की बूँदें अमृत भू की,
श्वेत वर्ण में रमक रही हैं।

उजला उजला हुआ दिवस है,
ऊष्णता से मुक्ति पाई।
चौमासे से पावन जीवन,
हर पल्लव पत्ती मुस्काई।

घर से बाहर निकल पड़े जन,
चेहरों पर है खुशी निराली।
बाल वृन्द दौडे गलियों में,
झूम रही है डाली डाली।

मन मयूर भी नाच रहा है,
कोयल कूक रही बागों में।
नई ताजगी निखर रही है,
नया रँग छाया रागों में।

बारिश कुदरत का उपहार,
वृक्ष धरा का अमरावतार।
नन्ही नन्ही बूँदें देखो,
करती धरनी का श्रृंगार।

12. नए साल में

आओ गाएं-
नए तराने, नए अफसाने,
आओ सजाएं-
नयी उमंगें, नयी तरंगें।

क्यों ना सोचें-
शुभ समृद्धि और खुशहाली।
क्यों हम सोचें-
टूटे सपने, यामा काली।

आओ भुलाएं-
ताप, तिमिर व घोर निराशा।
आज बनाएं-
नई उम्मीदें, ताजी आशा।

सुनें सुनाएं-
जीवन का संगीत अनोखा।
मिलकर गाएं-
नए साल का राग है चोखा।

बीत गया जो-
एक सबक उससे भी ले लो।
आने वाला पल-
खुशी खुशी इस पल को खेलो।

सुनो ध्यान से-
कभी नही भूलो सपनों को।
करो मनन फिर-
दर्द नही देना अपनों को।

जीवन क्या है-
एक प्रतिज्ञा, एक इरादा।

इसका मतलब–
नहीं तोडना किया जो वादा।

सबक एक है–
आओ करें प्रकृति– रक्षण ।
सच्चा सौदा–
रोकेंगे जीवों का भक्षण।

क्या हैं सपने–
मिट्‌टी से सोना उपजाएं।
नया संदेशा–
जिएं और जीना सिखलाएं।

क्या करना है–
अम्बर को भू पर लाएंगे।
ख्वाब और भी–
नीदों में चाँदनी उगाएंगे।

विश्व ध्येय है–
समर द्वंद को दूर है रखना।
नव चिन्तन–
मानवता को नही परखना।

नए साल में–
नए शब्द, शब्दों की माला।
नहीं दोहराना–
सबक, त्रुटि या दोष पुराना।

देश की खातिर–
जाति धर्म से ऊपर उठकर।
कर्म करेंगे–
हर संग्राम सहेंगे हँसकर।

स्व कर्मों से–
राष्ट्र का नव निर्माण करेंगे।
यही प्रण है– डगर कठिन, पर नही हटेंगे।

13. मैंने पूछा उस पंछी से

मैंने पूछा उस पंछी से –
जो ऊँचा ऊँचा उडता था,
पर नही धरा पर जमता था।

क्यों हुआ बावला फिरता है?
खुद क्यों ज्वाला में गिरता है?
तपता सूरज ऊपर नभ में,
आ जा भू पर, पा ले राहत,
नीचे शीतल मंद बयार बहे।
फिर क्यों निदाघ तू सहता है।

बस उड़ता ... उड़ता ... उड़ता ... ही जाता है।
क्यों नही कभी तू रुकता है?
क्या नही कभी तू थकता है?
क्या भूख प्यास ने ना घेरा?
एक बाकी अभी और फेरा?

देख! बारिश आने वाली है,
अंधियारी छाने वाली है।
सूरज भी अस्त हुआ देखो,
पागल भी पस्त हुआ देखो।
सभी छुप गए घरौंदों में,
नही दिखता कोई झरोखों में।
तू भी अब वापिस आ जा रे,
निज तन मन को समझा जा रे।
सब व्यस्त यहां काफी, देखो–

गलती की नही कोई- माफी देखो।
गर नही लौटा - खो जाएगा,
कुछ क्षण -पल में रो जाएगा।
क्यों दुख इतना तू सहता है?
थोथे दरिया सा बहता है?

सुनकर बोला वह नभ जीवी-
ए नर! मत चिन्ता मेरी तू कर,
मेरी खातिर -बिल्कुल मत डर।
यह नील गगन मेरा घर है,
मिट्टी का आशियाँ-मुट्ठी भर है।
रवि अस्त हुआ तो क्या गम है,
इन पांखों में अपार दम है।
मैं अनन्त आसमां पाऊँगा,
फिर क्यों कर मैं पछताऊंगा?
गर नही मिला- तो भी खुश कि-
लाखों को राह दिखलाऊँगा।
तू इन्सां है- ऐसी बातें कह सकता है,
मैं पंछी हूँ - ऐसी बातें सुन सकता हूँ।

14. हिन्दी हैं हम वतन हैं

नहीं विश्व पटल पर गूंजा था
जय हिन्द का नारा,
नहीं केसरिया बाने में लिपटा था
जगत यह सारा।

सहमा सहमा सा था इन्सां,
नही था भव में अगुवा कोई।
ऊहापोह में थी मानवता,
जीवन और जिज्ञासा थी सोई।

तारे नभ में असमंजस में,
वसुंधरा पर सब जीव बेचारे।
कैसे करें मंत्रणा स्व से,
नहीं था कोई माध्य, सब हारे।

तब हिन्दी ने सहज भाव से,
मनुष्यत्व का परचम लहराया।
प्राचीन पुरातन मूल्यों का,
शंखनाद विश्व में फहराया।

मधुर, मंगल सुरों का सिहरन,
इंसानियत का सुखद झरोखा।
यह थी एक सुरमयी क्रांति,
नहीं था कोई असत्य या धोखा।

सुगम, सरल भावों की जननी,
अपनत्व का दम था निराला।
जीर्ण शीर्ण मानवता हित में,
निस्वार्थ भाव से किया उजाला।

सर्वसुखाय का मंत्र बना था,
हिन्द देश का नया दिवाकर।

हिन्दी ने भी तब ठाना था,
रश्मिरथ पर विराज हुआ 'प्रभाकर'।

हिन्दी गौरव हिन्द देश की,
मुंशी, शंकर, हरिवंश, निराले।
आन, बान और शान वतन की,
प्रतिहारी बनो इसके मतवाले।

महादेवी, सुमित्र और शुभ दिनकर,
हिन्दी का गुणगान करें रे।
वीणापाणि का वरदहस्त संग,
नही किसी से कभी डरें रे।

भारत माता का राजमुकुट,
कण्ठ का सुरम्य हार हैं हिन्दी।
जब जब आजादी खौफ में है,
तीर और तलवार है हिन्दी।

जब जब सोई है मानवता,
मनुष्यत्व का श्रृंगार है हिन्दी।
नही मात्र बोली भाषा यह,
जन मानस का अधिकार है हिन्दी।
जन मानस का अधिकार है हिन्दी॥

15. क्योंकि मैं आईना हूँ

आईना हूँ मैं।
टँगा रहता हूँ दीवार के एक कोने में,
ड्राइंग रूम में वॉल क्लॉक के नीचे,
या लिविंग रूम में दरवाजे के पीछे।

गोल हूँ या मटोल हूँ,
तिकोना या चौकोर हूँ,
खामोशियों का शोर हूँ।
लोगों की आदत से पस्त हूँ,
कुछ परेशान हैं क्योंकि मैं तटस्थ हूँ।

एक गुनाह मैं रोज करता हूँ,
क्योंकि सच लोगों को दिखाता हूँ।
मेरे सामने आते हैं वो,
चेहरों को छिपाए हुए,
मैं उनके मुखौटे हटा देता हूँ-
तो उन्हें गुस्सा आता है।
मैं समझ नही पाता-
कि सच उन्हें क्यों सताता है।

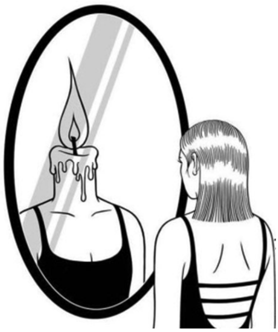

कई लोग मुझे घूरते हैं,
कभी घृणा से, कभी गुस्से से,
कभी त्यौरियाँ चढ़ाकर -
तो कभी होठों से चिढ़ा कर।
आईना हूँ ना,
इसीलिए ईमानदार हूँ,
अनेकों का राजदार हूँ।

अँधरों में सो जाता हूँ,
सपनों में कहीं खो जाता हूँ।

शीशा भी हूँ और दर्पण भी,
संग्राम भी हूँ और अर्पण भी।
जब मनुज भ्रमित हो जाता है,
संकरी गलियों में खो जाता है,
मैं सच्ची राह दिखाता हूँ,
सीधा पथ एक सजाता हूँ।

हर रूप मुझी में बसता है,
कभी रोता है, कभी हँसता है,
कभी बादल बनकर उड़ता है,
कभी पानी जैसा बहता है।
नहीं छिपा मुझसे स्व को,
ए नर- मैं तेरा अपना हूँ,
सोच-समझ ले अच्छे से,
मैं 'तू' हूँ, नहीं कोई सपना हूँ।

कभी होठों पर अहंकार बसे,
लालच कभी खुद पर खूब हँसे,
मैं 'स' को 'स' कह देता हूँ,
जब संकट सीमा पार करे,
मैं दरिया सा बह देता हूँ।
पर नहीं कोई परवाह मेरी,
दो पल नहीं तू बतियाता है,
आया, ठहरा फिर चला गया,
कभी मेरा दिल बहलाता है?

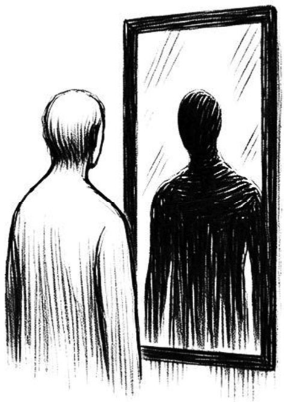

मैं सबको कर्म सिखाता हूँ,
जीने का मर्म बताता हूँ।
सहचर सच्चा हूँ मैं तेरा,
तुझे सच का पथ दिखलाता हूँ।

16. इंद्रधनुष सी दुनिया

इंद्रधनुष सी दुनिया सारी,
लगती बडी सलोनी प्यारी।
भाँति भाँति के जीव जानवर,
कूद और फाँद रहे धरती पर।

भूरी भूमि और अम्बर नीला,
मिट्टी रेत सुनहरा पीला।
हरे वृक्ष बरसाएं जीवन,
सुन्दर दिखते हैं वन उपवन।

रंगी तितलियां घूम रही हैं,
मधु फूलों का चूस रही हैं।
मोर चकोर हँस और भँवरे,
विविध रंगों में जीवंत हैं सगरे।

नीला सागर पर पानी खारा,
अमृत सम है विश्व यह सारा।
पंछी उड़ते पाँख फैलाए,
शीतल मंद हवा सहलाए।

चहचहाहट जीवन की सरगम,
सूने प्राण बिना कुछ अनबन।
सतरंगी मेघा जब बरसे,
प्यासा तन मन क्यों कर तरसे।

बाघ सियार हिरण और हाथी,
इस जीवन के सच्चे साथी।
हार श्रृंगार कुसुम बहुतेरे,
बास सुबास है शाम सवेरे।

बाल सुमन ज्यों मस्त कलन्दर,
रंज शोक बाहर ना अन्दर।
बेफिक्री दुनिया उसकी लय है,
जीवन में सबकी ही जय है।

चित्रकार ये कौन है आया,
संग सुहाने सपने लाया।
रातों दिनों को इन में रंग लो,
इंद्रधनुष सा जीवन कर लो।

17. देश नहीं बँटना चाहिए

जन जन का सम्मान देश में,
नही कभी घटना चाहिए।
धन दौलत की खातिर देखो,
स्वाभिमान नही थमना चाहिए।

निष्पक्ष विचार यह कहे चीखकर,
देश नही बँटना चाहिए,
सभी जाति और धर्म यहां पर,
अलग नही छँटना चाहिए।

देश हमारा न्यारा जग में,
बदनाम नही होना चाहिए।
निजी स्वार्थों के चक्कर में,
जन जन ना पिसना चाहिए॥

नाम देश का सबसे पहले,
हर दिल में बसना चाहिए।
अपराधी को साहस देना,
आज अभी रुकना चाहिए॥

देश बने सोने की चिडिया,
आतंक ध्वस्त होना चाहिए।
वीर भूमि के वीर पुरुष हम,
संकल्प नही दबना चाहिए॥

राजनीति मत करो देश पर,
राष्ट्र नही मिटना चाहिए।
भगतसिंह, लाला, सुभाष को,
राष्ट्र भक्ति अर्पण चाहिए॥

आजादी नही मिली भीख में,
लाखों ने बलिदान दिया।
उन बलिदानों की खातिर,
पाखंड नही रचना चाहिए॥

सैनिक बॉर्डर पर देश की खातिर,
अपनी जान गँवाते हैं।
सैनिक का सिर बॉर्डर पर,
अब और नही कटना चाहिए॥

क्यों हुए बावले फिरते हो भाई,
देश का शर्म लिहाज करो।
जो देश था सोने की चिड़िया,
अब नही कभी लुटना चाहिए॥

18. अक्सर मैं ऐसा करता हूँ

कभी शाँत समन्दर जैसा हूँ,
कभी अँगारों सा तपता हूँ।
कभी खडा खडा सो जाता हूँ,
कभी सो सोकर भी जगता हूँ।

मुट्ठी भर मिट्टी लेकर कभी,
ऊँचा गिरि एक बनाता हूँ।
भरा जलधि है अमृत से,
गागर में करो- बताता हूँ।

नयनों में कभी जल भरकर,
मैं मंद मंद मुस्काता हूँ।
कभी लिए हँसी निज अधरों पर,
अश्रु हृदय में सजाता हूँ।

मस्त पवन-सा बहता हूँ,
कभी विहग संग उड़ जाता हूँ।
धूल धूसरित होकर कभी,
मैं मिट्टी में मिल जाता हूँ।

उजियारा सुबह का लेकर,
हर दिशा में मैं बिखराता हूँ।
सूरज की गर्मी में मिलकर,
जीने की राह बताता हूँ।

कभी सागर की गहराई बन,
आशा के प्राण बचाता हूँ।
मरुभूमि में जल बनकर,
उम्मीदों को बल दे जाता हूँ।

मन में करुणा का भाव लिए,
पंछी के पर सहलाता हूँ।
दीप प्रेम के जल भरकर,
अम्बर पर खूब सजाता हूँ।

जब कहीं क्रंदन सुनता हूँ,
ममता के दीप जलाता हूँ।
जब भरी दुपहरी रवि जले,
शीतल छाया बन जाता हूँ।

दुनिया भटके पगलाई सी,
मैं चिंतन अग्नि सुलगाता हूँ।
राहें क्रूर हुई जग की,
मैं राह नई दिखलाता हूँ।

19. उन्मुक्त गगन का पंछी हूँ

मैं पंछी उन्मुक्त गगन का,
पाँखों को मत बांधो तुम।
नीले अम्बर में उड़ने दो,
नहीं निशाना साधो तुम।

उड़ना ही मेरा कर्म ज्ञान,
उड़ना ही सम्पूर्ण सम्मान।
उड़ते-उड़ते नहीं थकना है,
अशक्त मुझे नहीं मानों तुम।
अब नहीं निशाना साधो तुम॥

कृष्णा की वाणी कहती है,
धरती कितना कुछ सहती हैं।
कर्मों की अग्नि जलती है,
तपकर निज इष्ट सुधारो तुम।
अब नही निशाना साधो तुम॥

दिनकर अम्बर में प्रज्ज्वलित है,
वारिधर भी प्रफुल्लित है।
कोटि नक्षत्र चमकते हैं,
अपनी तकदीर सँवारो तुम।
अब नही निशाना साधो तुम॥

संग्राम समर्पित जीवन है,
हरा भरा यह उपवन है।
शीत ताप सब सावन है,
इतना मत ललकारो तुम।
अब नहीं निशाना साधो तुम॥

20. सहज पके सो मीठा होय

एक बेल मैंने थी बोई,
यह सोचकर- बड़ी एक दिन हो जाएगी।
चैन नींद खुशियों की खोई।
पानी डाला जड़ में हर दिन,
नही चैन था पल देखे बिन।

रोज सवेरे जल्दी उठकर,
खिड़की से बाहर झाँककर।
बढ़ती घटती लता ताकता,
लघु कोपलें फूट रहीं थीं,
नई पत्तियां निकल रहीं थीं।

कुछ दिन और गुजर गए यूं ही,
सुबह शाम भी सब गए यूं ही।
एक वंश गऊ का वहां आया।
नई कोपल को तुरत चबाया।

मेरे मन में संशय भारी,
मेहनत व्यर्थ हो गई सारी?
फिर मैंने एक किया जुगाड़,
चारों ओर लगा दी बाड़,
अगले दिन एक आँधी आई,
जिसने बाड़ उखाड़ भगाई।

घंटे दिन बहुमूल्य दे दिए,
गर्म, सर्द, बौछारों तक में।
मेरी बेल मुझे थी प्यारी,
अमिट अमर थी अपनी यारी।

तभी एक तितली वहां आई-
हृदय में आह्लाद जगाने,

भ्रमर भी गुंजन करते थे,
नवपल्लव में सृजन भरते थे।
बेल बढ़ रही धीरे धीरे,
ज्यों कागद तरणी तीरे तीरे।
एक विहग तब उड वहां आया,
नीड वल्लरी मध्य बनाया।
मन मयूर नाचे था मेरा,
बीती रात और हुआ सवेरा।
धैर्य सफलता का साधन है,
जल्दी में जो, रोवे सोय।
कान खोलकर सुन लो, भाई,
सहज पके सो मीठा होय।

21. हाथों की चन्द लकीरों में

जब किस्मत अपनी पढ़नी हो,
हाथों को अपने पढ़ लेना।
गर नहीं उन्हें पढ़ पाओ,
तो नई नियति गढ़ लेना।

इन हाथों की चन्द लकीरों में,
तेरे जीवन की गाथा है।
मेहनत से इन्हें बदल देना,
गर तुझको नहीं सुहाता है।

आडे तिरछे इन चिन्हों मे,
दर्शन नसीब के पाओगे।
कल –आज और कल का,
संकल्प यहीं दोहराओगे।

तेरे हाथों में ईश्वर ने –
सम्पूर्ण विधि को रच डाला है।
हाथों की अपढ लकीरों में,
उजले भविष्य का ताला है।

मत कर विचार अब – ए नर,
केवल करमों का अधिकारी तू।
चल उठ, अब बढा कदम आगे,
चेहरे पर ये मायूसी क्यूं?

चलते जाना –अब मत रुकना,
तू खुद स्व का निर्माता है।
धीर, वीर, बलवान बडा –
क्यों ना खुद को समझाता है?

रास्ते में गर थक जाए तू,
अम्बर से आँख मिला लेना।
अंधकार छा जाए तब,
सूरज से दीप जला लेना।

भाग्य भरोसे रहकर भी,
किसने मँजिल को पाया है?
गहरे पानी जो डूब गया –
मोती निकालकर लाया है।

जीवन असीम उम्मीदों का –
एक शुष्क मरुस्थल कैसा है?
मन हार गया तो तृषित है,
श्रम से शीतल जल – जैसा है।

लहरों पर लिख दे नाम तेरा,
धुलकर भी नही मिट पाएगा।
मत सोच लकीरों की भाषा,
बस पढता ही रह जाएगा।

नभ की ऊँचाई छूने को,
बाहों में दम अपार चाहिए।
चिड़िया की आँख बींधने को,
संकल्पों का शिलीमुख चाहिए।

इन मिथक लकीरों से मनवा,
भ्रमित कुण्ठित हो जाएगा।
सँभल जरा! होशियार हे नर!,
कब, कौन, कहाँ – पहुंचाएगा?

एक अति तुच्छ पतंगा भी,
जलती लौ पर मिट जाता है।
गोलक का श्रेष्ठ जीव होकर,
तू क्यों इतना घबराता है?

तंदुल का गल्ला लिए चींटी,
हौले हौले से चलती है।
मकरी भी रेशम के धागों पर,
कई बार फिसल कर चढ़ती है।

लकीरें नही विहग के पाँखों में,
और नही व्याघ्र के भालों पर।
यह लोक चले मेहनत के दम,
ना चले लकीर की चालों पर।

सोच समझ, फिर कदम बढ़ा,
घना तिमिर छँट जाएगा।
श्रम, संकल्प, समर्पण से,
मन का संशय मिट जाएगा।

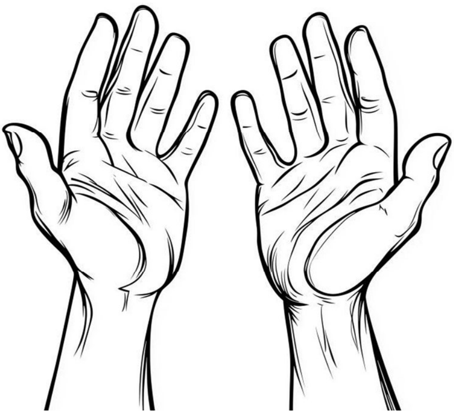

22. मैं सृष्टि हूँ

मन में एक शान्त संकल्प लिए
आत्मतत्व का अनगाया गान लिए
बिसार खुद को पर समर्पण में
दया, ममता व शीलता का भाव लिए।

मैं बल, मैं हल, मैं शक्ति हूँ
संसार, धरा की भक्ति हूँ
मत समझ मुझे अबला प्राणी
मैं अमिट अजर अमर प्रकृति हूँ।

मैं सौम्य सौंदर्य की पूर्णता
मैं ईश की अपूर्व पुण्यता
मैं गर्व, सर्व, निर्भीक गति
अहसास भरी निर्भीकता।

मैं पुष्प, कली, भ्रमर, तितली
सृष्टि का मूल स्वरूप हूँ मैं
मैं ही सृजन, मैं ही पालन
जीवन का अनन्त आधार हूँ मैं।

गर सहनशीलता का अम्बर मैं
दृढ़ता भी मेरा आभूषण है
क्षमा, दया, प्रेम, संकल्प
अस्तित्व मेरा भी पूरण है।

स्नेह की बहती धारा मैं
मूल्यों की मात्र इकाई है
गर काट दिया इस जड को तो
विश्व वट की मृत्यु आई है।

समझो, ए नर! जीवन की छाया रहने दो
प्यार की निर्झर नदियां बहने दो
मत विष घोलो द्वेष त्रास का
मुक्त अनिल नभ में विचरने दो।

23. जी लो जंगल

जीवन बना है रहस्यमयी जंगल,
अनगिनत रास्ते-जीने के वास्ते,
फिर भी नही है जीवन में मंगल,
जीवन बना है रहस्यमयी जंगल।
छोटे बडे पेड़ यहाँ,
लहराती बलखाती बेल यहां,
रँग बिरंगे कीट पतंगे,
ताल तलैया, जल की धारा,
शाँत सरोवर जैसा तन है,
लहरों सम चंचल-सा मन है।
अथाह सागर, नही कोई किनारा,
जैसे समा गया है ब्रम्हांड सारा,
चींटियों के ढेर,
कहीं केंचुए सवा सेर,
कहीं शेरों की दहाड़ तो,
कहीं पेड़ों का पहाड़,
गीली सी मिट्टी
जैसे जीवन की चिट्ठी,
तरुवर की गहरी छाया,
सुख सागर है आया,
दलदल की झीलें,
जैसे बिस्तर में कीलें।
कोयल की कूक में,
सावन की हूक में,
काले कव्वे की काँव में,
इन हरे भरों के गाँव में,

कुदरत यहां पसरी है,
यह बेजुबानों की बस्ती है।
सुबहों का ढेला,
शामों का मेला।
एक है व्यापारी,
खरीददारों का रेला।
मेंढक, हिरण और हाथी,
एक दूजे के सच्चे साथी।
जंगल लोक है अलबेला,
मीठा मीठा जैसे गुड़ का डेला।
शीतल मंद बयार बहे है,
जीव यहाँ चुपचाप रहे है।
तुम भी कभी आओ, मेरे यार,
मिलेगा यहाँ भरपूर प्यार।
मकरी रेशे पर जीती है,
खुद का ही अमृत पीती है।
हवा बहे पेड़ों को छूकर,
नदिया पर्वत से कहती है।
बडा मधुर भँवरे का गीत,
जैसे हो सागर का शीत।
पत्तों के जैसी शीतलता,
सरगम सी सुहानी प्रीत।
लेपर्ड दादा बहुत सयाने,
भूत भविष को तुरत पहचाने।
लोमडी काकी चतुर बडी हैं,
ज्ञान की जैसे एक नदी है।
बरगद दादा शाँत खडे हैं,
सौम्य भाव से जिद पर अडे हैं।

मिलकर सब जैसे रहते हैं,
कोई शिकायत नही कहते हैं।
अब भी सब वैसे ही रहना,
सुख और दुख मिलकर है सहना।
खग ने तरु पर नीड़ बनाया,
जितना चहिए, उतना लाया।
आसमानों पर सबका हक है,
वसुधा, जननी एक ही घर है।
जंगल से जीना हम सीखें,
भाँति-भाँति की सुन्दर रीतें।
पेड़ों की ऊँचाई देखो,
नया एक संबल बतलाती।
नर की दुविधा है ये,
कि आपाधापी उसे सताती।
जंगल में है घोर शाँति,
द्वंद द्वेष का नाम न कोई।
कुदरत का इन्साफ अनूठा,
सब संतुष्ट, दुखी नही कोई।
भालू का भोलापन ऐसा,
जैसे मधु की मीठी गोली।
हर मौसम है प्यार का मौसम,
नही बदलती इनकी बोली।
धरती सबका एक बिछौना,
आसमान है एक ओढ़नी।
एक धर्म है, एक कर्म है,
एक है जीवन, एक मर्म है।
नही चीखते, ना चिल्लाते,
मूक भाव से जीते जाते।

नहीं जरूरत है ज्यादा की,
अपना अपना हिस्सा पाते।
शूल पुष्प हैं मित्र निराले,
एक डाल पर मिल रहते हैं।
सरदी गरमी या बारिश हो,
बिना शिकायत सब सहते हैं।
जंगल सच्चा लोकतंत्र है,
न्याय, आजादी का दर्पण।
बैर, द्वेष नही रखे कोई,
जीवन जीवन को है अर्पण।

24. गाँव की याद में

कितने दिन हुए, गांव घर आए।
धूल भरी पगडंडी, मेडें,
हाय! बुलातीं चुपके चुपके।
सूनी सी पनघट की राहें,
मन बतियातीं चुपके-चुपके।

बड भाऊ मन्दिर की दहली,
राह निहारे चुपके चुपके।
शाम ढले तो शंख आरती,
मन नगर बुहारे चुपके-चुपके।

कितने दिन हुए, गांव घर आए।
फाल्गुन में बासन्ती झूले,
मुझे झुलाए चुपके चुपके।

भंवरे फुनगे भी कानों में,
राग जगाएं चुपके-चुपके।
रात हुई तो चन्दा तारे,
लोरी गाएं चुपके-चुपके।

गर मैं छत पर सोना चाहूं,
मुझे जगाएं चुपके-चुपके।
कितने दिन हुए, गांव घर आए।
होली पर रंगीन पिचकारी,
प्यार उड़ेले चुपके-चुपके।

बैर भाव व द्वेष भूलकर,
जीना सिखलाए चुपके-चुपके।

हरे भरे सरसों के खेत,
खादर मिट्‌टी, बलुआ रेत,
जीवन के रंग- श्याम और श्वेत,
मन महकाएं चुपके चुपके।

कितने दिन हुए, गांव घर आए।
बौंगौं पर छायी हरियाली,
अम्बर में घटाएं काली काली।
मुस्कान मधुर व हंसती आँखें,
मुझे हंसाए चुपके चुपके।

सुबह शाम सूरज की किरणें,
तन मन सब जग जगमग, जगमग।
निज मन भीतर जमी कालिमा,
को चमकाएं चुपके चुपके।

कितने दिन हुए, गांव घर आए।
अधरों पर वो गीत बासन्ती,
चाचा चाची, मौसा मौसी।
सब जन जैसे मस्त कलन्दर,
हृदय हरषाए चुपके चुपके।

हंसी, ठहाके, गीत और गजलें,
मन ना बदले, बदली शक्लें।
सुख दुख के साथी वो सच्चे,
रूठों को मनाएं चुपके चुपके।

कितने दिन हुए, गांव घर आए।
चौपालों पर महफिल का दौर,
न त्रस्त हवाएं, ना कटु शोर।
बुजुर्गों की वाणी, सबने मानी,
मुझे रिझाएं चुपके चुपके।

दिल करता है मैं उड़ जाऊँ,
खेतों खलिहानों से मिलने।
डाल डाल और पात पात से,
पंछी बनकर चुपके चुपके।

कितने दिन हुए, गांव घर आए।
इठलाती बल खाती बेलें,
खपरैलों व दीवारों पर।
कीट पतंगे भाँति भाँति के,
उन में छुप जाते, चुपके-चुपके।

दादी नानी कहें कहानी,
'गुड़िया रानी बड़ी सयानी'।
काकू, छुटकी, नीलू, रानी,
आँखें मिचकाएं, चुपके-चुपके।

कितने दिन हुए, गांव घर आए।
बे-मतलब प्रेम और भाईचारा,
प्रत्येक बने दूजे का सहारा।
रार नही, बस हंसी खुशी-
बसती चेहरों पर चुपके-चुपके।

तीजों का मौसम आया है,
गीत, प्रीत, झूले लाया है।
घेवर से सज उठी दुकानें,
सुनता हूँ मैं- चुपके-चुपके।

कितने दिन हुए, गांव घर आए।
चिड़ियों की चहक, मुर्गे का गीत,
बाजे ज्यों- ब्रह्म संगीत।
मन मचले, सुनने को आतुर,
क्या जतन करुं मैं-चुपके-चुपके।

फसल कटन की आए बारी,
प्रफुल्लित हैं सब नर नारी।
स्वेद स्नान से निर्मल पावन,
जग महकाएं चुपके चुपके।

कितने दिन हुए, गांव घर आए।
ढोल-नगाड़े, ढफली बाजे,
हर ओर वीणा सुर साजे।
बच्चे बूढ़े, लोग लुगाई,
ढुमक रहे हैं, चुपके-चुपके।

नहीं कहीं पर द्वेष-विद्वेष,
ऐसा सोना है ये देश।
स्वस्थ्य मस्त हैं - सभी यहां पर,
शहरी ललचाएँ चुपके-चुपके।

कितने दिन हुए, गांव घर आए।
खेल कूद या भाग दौड में,
सबसे आगे हरदम रहते।
वालीबॉल, कबड्डी, लिफ्टिंग,
सब अजमाते चुपके-चुपके।

तोरी बथवा लौकी साग,
मोटा खाना बिन-गुन भाग।
स्वयं उगाते, स्वयं पकाते,
सबको खिलाते चुपके-चुपके।

कितने दिन हुए, गांव घर आए।
कर महके ज्यों महके चंदन,
सुबह शाम कर माटी वन्दन।
कर्मों से स्व भाग्य जगाते,

नहीं सिसकते चुपके-चुपके।
अहंकार का करके नाश,
समता ममता-मन में वास।
चाची ताई, बाल वृन्द सब,
चरण वन्दना चुपके-चुपके।
कितने दिन हुए, गांव घर आए।
हर एक है कल का नायक,
मूल्यों का प्रहरी हर पालक।
नहीं लालसा ज्यादा की,
कम में मुस्काते चुपके-चुपके।
जय जवान और जय किसान का,
नारा यहाँ बुलंद रहेगा।
क्योंकि ...!
मिट्‌टी और स्वाभिमान की खातिर,
हम मिट जाते चुपके-चुपके।
कितने दिन हुए, गांव घर आए।
कितने दिन हुए, गांव घर आए।